Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 2 | ISSUE : 11 | NOV 2016

राष्ट्रकूटकालीन शासन-प्रणाली

विनय शंकर मिश्रा [1]

[1] मगध विश्वविद्यालय

ABSTRACT

Keywords:

राष्ट्रकूट साम्राज्य लगभग तीन शताब्दियों (आठवीं से दसवीं सदी) तक अस्तित्व में रहा। अल्तेयर के बाद ऐसे तो राष्ट्रकूट शासन प्रणाली, समाज और धर्म, शिक्षा एवं साहित्य तथा राष्ट्रकूट-कला के बारे में जानकारी मिलती है। अल्तेयर के बाद मिले अभिलेखों से भी कोई खास सहायता नहीं मिलती है। शायद ऐसा संभव इसलिए हुआ जैसा कि एफ॰डब्लू॰ थॉमस ने अल्तेयर के कार्यो की समीक्षा करते हुए लिखा हैः

..... it is more difficult to distinguish the features proper to the Rastrakuta period and area from those of greater areas in space and time.....and one is rather constrained to seek information outside the pre-determined live. It is not the fault of the historian if for the most part the methods of Indian administration have rather been uniform and constant.[1]

यद्यपि किसी विश्वसनीय तथ्यों के अभाव में जैसे कौटिल्य का अर्थशास्त्र, या एन-ए- अकबरी, राष्ट्रकूट कालीन शासन प्रणाली पर विशद् प्रकाश डालना कठिन है, जबकि उनके अभिलेखों के आधार पर कुछ विचार प्रकाश में आते हैं। प्राचीन परम्परा का अनुपालन करते हुए, राष्ट्रकूट भी जनसामान्य की गतिविधियों से अवगत थे जैसे-राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक।

हम पाते हैं कि साम्राज्य दो भागों में विभक्त था- (1) सम्राट के प्रत्यक्ष नियंत्रण में, और (2) वसालस के (Vassalas) अधीन। शक्तिशाली वसालय जो राष्ट्रकूट शाखा गुजरात पर शासनारूढ़ थी, वह अपने आन्तरिक मामलों में स्वतंत्र थी ताकि उन्हें पूर्ण स्वायतता प्राप्त थी। वह सम्राट से बिना पूर्वानुमति के ही किसी को भी जमीन बन्दोबस्त कर सकती थी। वसालस कचहरी का काम देखा करते थे एवं सम्राट की इच्छानुसार सैनिक अभियानों में साथ रहते थे। वे नियमित कर देते थे तथा आवश्यकता पड़ने पर सैनिक सहायता भी देते थे।[2]

भदान के शब्दों में- They were obliged to entertain an imperial resident at their courts and used to depute representatives at the imperial court. They could have their sub-feudatories who enjoyed very little independent power".[3]

वे लोग बोल-चाल में राजा कहे जाते थे तथा गाँवों से राजस्व वसूली के लिए पूर्वानुमति प्राप्त कर लेते थे।[4] सामन्त तथा उप सामन्त एक तरह से स्वायतता प्राप्त थे तथा केन्द्रीय सरकार के निर्देशानुसार शासन कार्य चलाते थे। सामंत यदि वागी होते थे तो उन्हें कड़ी सजा दी जाती थी, उनके हाथी, घोड़े एवं खजाने जब्त कर लिये जाते थे तथा सम्राट के आदेश पर सश्रम कारावास भी मिलता था।[5]

वातापी के चालुक्यों तथा वेंगी की तरह राष्ट्रकूट साम्राज्य कई भागों अथवा यूनिटों में विभक्त था जो राजवंश के अभिलेखों में भी वर्णित है। इन्हें राष्ट्र, मंडल, विषय भुक्ति और ग्राम आदि के रूप में जाना जाता था।

राष्ट्र और विषय पर विद्वानों के विचारों में सामन्जस्य का अभाव है। अल्तेयकर[6] के अनुसार, कलचुरियों के समय में 'विषय, 'राष्ट्र, से वृहत्तर था जबकि राष्ट्रकूटों के समय 'राष्ट्र, 'विषय से प्रशासनिक दृष्टिकोण से काफी बड़ा था। मिराशी[7] ने भी इस तर्क को स्वीकार किया है। वाई॰आर॰ गुप्त[8] के अनुसार राष्ट्र प्रशासन का बड़ा भाग था और विषय अनुमण्डल।[9] मंडल शब्द पड़ोसी राज्यों में प्रचलित था। जैसे लता मंडल[10] और आन्ध्र मंडल[11]) जो कि क्षेत्रीय यूनिट से संबंधित था।[12] ए.पी. भदान के विचारों में-

The Alas Plates of Gobinda II (A.D. 769) rafer to Vingi-Manadala which may be due to the fact that in none of the Rastrakuta records, mandala divisions are mentioned for the home province.[13]

राष्ट्र में प्रायः चार या पाँच जिले होते थे,[14] और राष्ट्र का प्रधान राष्ट्रपति कहलाता था, जो कि असैनिक एवं सैनिक कार्यो की देखरेख करता था। उसका प्रमुख कार्य कानून एवं व्यवस्था बनाये रखना, बगावत दबाना, सामन्तों एवं अधिकारियों पर नियंत्रण रखना, वागियों को दबाना, कर वसूलना और रेकर्ड सुरक्षा, आदि था। इतने सारे कार्यो के अतिरिक्त, राष्ट्रपति के अधीन काफी संख्या में सैनिक भी होते थे, तथा वह वसाल की सुविधा भी प्राप्त किया था। अल्तेकर के अनुसार[15] आधुनिक प्रमण्डल आयुक्त की तरह राष्ट्रपति भी

प्रशासनिक एवं राजस्व वसूली के प्रभारी होते थे। वह क्षेत्रीय समस्यओं का सजग प्रहरी एवं जैसे ग्रामों का जिनका राजस्व मंदिरों की व्यवस्था के लिए होता था, आदि का इन्चार्ज था। वह सम्राटों की अवहेलना नहीं कर सकता था एवं जिला एवं अनुमण्डल अधिकारियों की नियुक्ति का अधिकार भी उसे नहीं था।

राष्ट्र विषयों में विभक्त था जो आधुनिक जिलों के समान था एवं उनके पदाधिकारियों को विषयपति कहा जाता था। समकालीन अभिलेखों में अनेकों विषयों का उल्लेख मिलता है। जिनके गाँवों की संख्या एक हजार से भी ज्यादा थी। उदाहरण के लिए चुना का (आधुनिक पूणे) में 1000, करहट्क (आधुनिक करहद) में 500 से भी ज्यादा। प्रत्येक विषय भूक्ति में विभाजित था जिसमें 50 से 70 गाँव होते थे। उनका नामकरण शहर के नाम से संबंधित था। हमें स्पष्ट रूप से कुछ भूक्तियों के नाम मिलते हैं जैसे कोयरका- पंचायत भुक्ति (सामंगद लेख)[15], भजंतिया सपत्ती, ग्राम भुक्ति (कोनूर लेख),[17] प्रतिष्ठान भुक्ति (गोविन्द तृतीय का पेथन लेख)[18] मुक्ति गाँवों के कई ग्रुपों को लेकर बनता था और आधुनिक तसहील की तरह होता था एवं उसके अधिकारियों को भागपति कहा जाता था। इसके अधिकारियों की स्थिति राष्ट्रपति की तरह थी एवं उसका प्रमुख कार्य अधिनस्य कर्मचारियों की सहायता से राजस्व प्राप्त करना था।[19] इन अधिकारों को लगान मुक्त जमीन प्राप्त था।

ग्राम-प्रशासन मुख्यतः ग्राम प्रमुख (ग्रामकूट) के जिम्मे था। ग्राम प्रमुख स्वसैनिक को नियंत्रित करता था। वह शान्ति व्यवस्था का प्रधान तथा राजस्व वसूली का अधिकारी होता था। राजस्व मामलों में लेखापाल उसकी मदद करता था।[20] गांव एवं शहर स्तर पर पोपलुर एलिमेंट काफी सफल था। ग्राम सभा, शिक्षा, पूजास्थलों तथा ट्रस्ट, सड़क निर्माण, न्याय व्यवस्था तथा अन्य कार्यो जो सार्वजनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होते थे, सम्पादित करती थी।[22]

शहरों एवं कस्बों का प्रशासन नगरपति के जिम्मे था। पदाधिकाररयिों का उल्लेख प्रायः कम ही राष्ट्रकूट अभिलेखों में मिलता है लेकिन राष्ट्रकूटों के सामन्तों के लेखों में उनका उल्लेख देखने को मिला है।[23] कभी-कभी सेना के कैपटेन एवं विद्वान लोग इन पदों पर नियुक्त किये जाते थे।

केन्द्रीय शासन प्रबंध

राष्ट्रकूट अभिलेखों से हमें प्रायः उनकी नागरिक शासन प्रणाली की झलक मिल जाती है। इनकी मदद से हम शासन-तंत्र और उसकी कार्य-पद्धति का अच्छा चित्र उपस्थित कर सकते हैं। शासन में शीर्ष पर राजा होता था। राजा ही शासन का केन्द्र बिन्दु था और उनके ही पौरूप तथा प्रशासनिक प्रबुद्धि से साम्राज्य का अस्तित्व और सुचारू संचालन निर्भर करता था।[24] राजा का पद आनुवंशिक था।[25] उसके बाद प्रायः सबसे बड़ा बेटा राजा होता था। सयाना होने पर उसे विधिवत् 'युवराज' बना दिया जाता था। 'युवराज' प्रायः राजधानी में ही रहता था और प्रशासन के कार्यो में अपने पिता की सहायता करता था। सामान्यतया ज्येष्ठ पुत्र को ही उसका उत्तराधिकार मिलता था, किन्तु राजा स्वयं ही परिस्थितियों को देखकर इस नियम में परिवर्त्तन कर अपना उत्तराधिकारी अपने जीवन काल में ही घोषित करता था। विषम परिस्थितियों में अथवा युवराज की अल्पावस्था को ध्यान में रखकर वह अपने किसी सम्बन्धी या भाई को भी राजकाज देखने, साम्राज्य की सुरक्षा करने और युवराज को उचित दीक्षा देने के लिए मनोनित करता था। परन्तु कभी-कभी योग्यता के आधार पर छोटे पुत्र को भी उत्तराधिकार मिल जाता था।[26] राष्ट्रकूट इतिहास में सिंहासन के लिए गृह युद्ध के उदाहरण भी मिलते हैं। युवराज अपने पिता के प्रशासन में योग देते हुए राजकीय विषयों की पूरी शिक्षा प्राप्त कर लेता था। छोटे बेटों को प्रायः प्रान्तपति नियुक्त किया जाता था। चालुक्य शासन में तो राजकुमारियों को भी कभी-कभी प्रशासनिक पद मिल जाते थे, किन्तु राष्ट्रकूट शासन में ऐसे उदाहरण बहुत कम ही मिलते हैं।[27] यदि राजा अवयस्क होता तो रानी के बजाय प्रायः दूसरे पुरुष राजकाज चलाते थे।

राज दरबार और केन्द्रीय शासन का तंत्र राजधानी में ही प्रतिष्ठित था। राजा यदि किसी अभियान आदि पर राजधानी से बाहर न होता तो वह नियमित रूप से राज दरबार में आता था। किसी अतिथि के आगमन पर एक विशाल साम्राज्य की शान शौकत का प्रदर्शन होता था। राज-प्रसाद के प्रांगण में अपने पैदल, घुड़सवार या हाथियों के हस्तों के साथ सेनाओं के नायक ड्यूटी पर उपस्थित रहते थे। सम्राट की शक्ति के प्रदर्शन के लिए विजित राजाओं से छीने गये घोड़ों और हाथियों का भी प्रदर्शन होता था।[28] राजा का प्रतिहार की स्पष्ट आज्ञा के बाद ही किसी व्यक्ति को दरबार में प्रवेश मिलता था। सामंतों और राजनयिकों को जबतक दरबार के कर्मचारी राजा के समक्ष न ले जायें उसे बगल के एक कक्ष में प्रतीक्षा करनी होती थी। दर्शक जब पहुँचता था तो उसे राजा मूल्यवान वस्त्र और आभूषण धारण किये एक शानदार सिंहासन पर विराजमान मिलता था। गणिकायें और अन्य नौकर उसके अंगरक्षक के रूप में उपस्थित होते थे। दरबार के प्रमुख व्यक्तियों में सामंत, विदेशों के राजदूत, सेना और नागरिक शासन के उच्च पदाधिकारी, कवि, वैध, ज्योतिषी, महाश्रेष्ठी और निगमों के प्रतिनिधि होते थे।

राजा अनेक मंत्रियों की सहायता से शासन करता था। अभिलेखों में मंत्रियों के विभागों का उल्लेख नहीं मिलता है तथापि समकालीन प्रमाणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि मंत्रि-परिषद में प्रधानमंत्री, विदेश मंत्री, राजस्व मंत्री, कोषाध्यक्ष, प्रधान न्यायाधीश, महासेनापति और पुरोहित होते थे।[29] आधुनिक काल में तो विभागाध्यक्ष से परे मंत्री का स्थान होता है। किन्तु प्राचीन काल में ये दोनों पद एक ही व्यक्ति के जिम्मे था। मंत्रियों की योग्यता के मानदंड

के संबंध में अभिलेखों से कुछ भी जानकारी नहीं मिलती और न उनसे यही पता चलता है कि उनका चुनाव किस आधार पर किया जाता था। किन्तु हम मान सकते हैं कि सामान्य योग्यता और सैनिक गुणों के कारण मंत्रियों का चुनाव होता था। वे मंत्री के साथ-साथ सैनिक अधिकारी भी होते थे। ध्रुव के विदेश मंत्री दल[30] की भांति कुछ को तो सामंत का पद और जागीरें भी प्राप्त थीं। राजा और मंत्रियों के बीच आपस में सद्पूर्ण विश्वास रहता था। मंत्री को प्रायः राजा का दक्षिण बाहु कहा गया है।[31] मंत्रीपरिषद का प्रमुख कार्य बहुत हद तक सलाह देना था लेकिन अंतिम अधिकार सम्राट को ही प्राप्त था।[32]

मंत्री और सेनापति दोनों की वर्ग के अधिकारी युद्ध और प्रशासन का मिला-जुला दायित्व निभाते थे। राजदरबार में इनके अतिरिक्त कवि, वैध, ज्योतिषी, श्रेष्ठी और श्रेणीमुख्य भी प्रमुख स्थान पाते थे।

राष्ट्रकूट नरेश अपनी नरेश और वैभव के लिए प्रसिद्ध थे। वे महाराजाधिराज, परमभटरक आदि बड़ी-बड़ी उपाधियां धारण करते थे। उनके दरबार बड़ी शान-शौकत के साथ लगते थे। उनमें मंत्री, सामन्त, उच्चपदाधिकारी, राजदूत सभी उपस्थित होते थे।

राष्ट्रकूट नरेश अपनी नरेश और वैभव के लिए प्रसिद्ध थे। वे महाराजाधिराज, परमभटरक आदि बड़ी-बड़ी उपाधियां धारण करते थे। उनके दरबार बड़ी शान-शौकत के साथ लगते थे। उनमें मंत्री, सामन्त, उच्चपदाधिकारी, राजदूराष्ट्रकूट साम्राज्य का ढांचा सामन्ती था। अनेक सामन्तों की निष्ठा पर ही साम्राज्य की शान्ति और सुरक्षा निर्भर करती थी। अतएव ऐसे अर्द्धस्वतंत्र सामन्तों पर शासन की कड़ी नजर होती थी। साम्राज्य के बड़े-बड़े प्रदेश सामन्तों के अधीन थे। सामन्तों एवं अधिकारियों को अपने कार्यो की सफाई देने के लिए अक्सर राजधानी में ही तलब किया जाता था। समूचे साम्राज्य में गुप्तचर नियुक्त थे जो इन प्रांतीय और छोटे अधिकारियों की मंशा और कार्यो की रपट राजधानी भेजते रहते थे।त सभी उपस्थित होते थे।

राष्ट्रकूट साम्राज्य में कुछ क्षेत्रें का प्रबंध सामन्त करते थे। कुछ स्थानों का शासन सीधे केन्द्र के अधीन होता था। प्रमुख सामंत जैसे दक्षिण गुजरात के शासकों को प्रबंध में पूर्ण स्वायत्ता प्राप्त थी। वे राजा की आज्ञा के बिना भी गाँवों का हस्तांतरण कर सकते थे। सामंतों के अधीन उनके भी उप-सामंत होते थे। पर इनके अधिकार सीमित थे। इन उपसामंतों को औपचारिक रूप में 'राजा' कहा जाता था। उन्हें राजस्व की माफी या गाँवों को हस्तांतरण के पूर्व मंजूरी लेनी होती थी।[33] सामंतों को राजा के आदेशों का पालन करना होता था। उन्हें नियमित रूप में कर देना पड़ता था टोर सेना में एक निश्चित संख्या में सैनिक भी भेजने पड़ते थे। अपनी सेना लेकर वे सम्राट के साथ उसके अभियानों में भी जाते थे। उनके दरबार में राजा का प्रतिनिधि भी रहते थे जो वहाँ की घटनाओं पर नजर रखते थे।[34] जबतक सामन्त सम्राट के प्रति स्वामिभक्ति प्रदर्शित करते रहते थे तब तक सम्राट उनके आन्तरिक मामलों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप न करता था।[35] यदि वे विद्रोह करते तो पराजय के बाद भी उन्हें अपमान सहना पड़ता था। यदि सम्राट को आवश्यकता पड़ी तो उन्हें हाथी, घोड़े, ऊँट तथा सैनिक साज-समान देने पड़ते थे।[36] कभी-कभी तो उनसे खिदमतगारों का भी काम ले लिया जाता था।[37]

सीधे प्रबंधवाले क्षेत्र 'राष्ट्र' और 'विषयों' में विभाजित थे। ये आधुनिक कमिशनरी और जिलों के समान होते थे। एक 'विषय' में 1000 (जैसे पूणक अर्थात पूणे) से लेकर 4000 गाँव (जैसे करहाटक, अर्थात, आधुनिक कराड) होते थे। 'विषय' में अनेक 'भुक्तियां' होती थीं। एक 'भुक्ति' में 50 से 70 गाँव होते थे। उनके नाम उनके मुख्यालय के नाम पर होते थे।[38] भुक्तियों में 10 से 20 गांवों के अलग-अलग समूह होते थे।[39] गांव शासन की सबसे छोटी इकाई थी।[40]

नगर और ग्राम शासन में परिषदों का भी विशेष महत्व होता था। इन परिषदों के सदस्यों का चुनाव नहीं होता था। ग्राम-परिषदों के सदस्य प्रायः प्रत्येक ग्राम-कुल के ज्येष्ठ होते थे। ग्राम-महाजन या ग्राम-महत्तर इन परिस्थितियों का प्रमुख होता था, जो अपने इच्छानुसार सदस्यों को नियुक्त कर छोटी कमेटियां बनाता था। ये छोटी कमेटियां मार्ग, शिक्षा, पाठशाला, मंदिर, सिंचाई, कर वसूली आदि का प्रबंध करती थी। ग्राम-परिषदें छोटे मुकदमों पर विचार भी करती थीं। धनमूलक विवादों पर इनका निर्णय सरकार को भी मान्य होता था।

'राष्ट्र' का प्रधान 'राष्ट्रपति' कहा जाता था। 'राष्ट्र' में आज के चार या पांच जिलों के बराबर इलाके होते थे। राष्ट्रपति के अधीन नागरिक और सैनिक दोनों प्रबंध थे। उसका कर्तव्य अपने देश में शांति और व्यवस्था बनाए रखना होता था। छोटी सामन्तों तथा अधिकारियों पर नजर रखना भी उसका काम था। यदि सामंत विद्रोह करते तो उनका हनन करना भी उसका काम था।[41] अतः स्वाभाविक ही राष्ट्रपति को अपने अधीन पर्याप्त संख्या में सैनिक रखने पड़ते थे। वह स्वयं भी एक सैनिक अधिकारी होता था। प्रायः उसे सामंत का पद और दर्जा प्राप्त होता था।

आधुनिक कमिशनरों की भांति राष्ट्रपति राजस्व प्रबंध के भी प्रधान होते थे। जमीन से लगान की वसूली का उत्तरदायित्व उन्हीं का होता था। वे स्थानीय अधिकारों और विशेषाधिकारों का उपयोग बड़ी सावधानी से करते थे। जिन गांवों का राजस्व मंदिरों या ब्राह्मणों के दान कर दिया जाता था, उनका रेकार्ड भी ये ही पदाधिकारी रखते थे। राजा की आज्ञा बिना वे राजस्व का हस्तांतरण नहीं कर सकते थे। जिलों और तहसीलों के अधिकारियों की नियुक्ति का भी अधिकार उन्हें प्राप्त नहीं था।[42]

भूमि पर व्यक्तिगत स्वामित्व की मान्यता थी। किन्तु कर की अदायगी न करने पर राजा को कृषक की भूमि से वंचित करने का

अधिकार होता था उस और गोचर भूमि पर सामूहिक स्वामित्व अथवा सार्वजनिक उपभोग का अधिकार ग्रामवासियों को होता था। वन, खनिज जैसी भूमि पर राजा का स्वामित्व था। विविध प्रकार के भूमिकर प्रचलित थे। भागकर और उद्रंगकर का अभिलेखों में बराबर उल्लेख आया है। किसान भूमिकर अन्न के रूप में भी दे सकते थे और वसूली भी दो तीन वार में होती थी। कर माफी के भी उदाहरण मिलते हैं। अग्रहार, ग्राम कर से मुक्त थे।

सैन्य व्यवस्था

उस समय आपसी राजनीतिक प्रतिस्पर्द्धा काफी थी, अतः साम्राज्य को सुरक्षित एवं व्यवस्थित बनाये रखने के लिए शक्तिशाली सेना की सख्त जरूरत थी।[43] शान्तिकाल में भी कभी-कभी बगावत को दबाने के लिए सेना की आवश्यकता आ पड़ती थी। दक्षिण भारत की स्थिति को देखते हुए राष्ट्रकूटों ने एक विशाल सेना का गठन किया था। उन्होंने सैन्य-संगठन पर भी ध्यान दिया। सेना का प्रबंध बड़ा ही सुव्यवस्थित था।[44] उत्तर भारत की दो प्रधान शक्तियों (प्रतिहारों तथा पालों) को पराजित कर ध्रुव ने बड़ा नाम कमाया था । उसकी गणना भारत के महान सम्राटों में की जाने लगी थी। कई शताब्दियों के उपरान्त दक्षिण के इस नरेश ने उत्तर के नरेशों को नतमस्तक किया था। डाú अल्तेयर के शब्दों में 'ध्रुव राष्ट्रकूट शासकों में सबसे अधिक योग्य था, लगभग दस वर्षो के लघुकालीन शासन में उसने राष्ट्रकूटों में सबसे अधिक योग्य था, लगभग दस वर्षों के लघुकालीन शासन में उसने राष्ट्रकूटों की सत्ता न केवल दक्षिण में पुनसर्ंथापित की वरन् उसने राष्ट्रकूटों को अखिल भारतीय शक्ति बना दिया।[45]

राजा सर्वदा राज्य विस्तार का यत्न करता था। इसलिए राष्ट्रकूटों का सैनिक तंत्र शक्तिशाली और कुशल था। उनके पास सदा एक विशाल सेना रहती थी जिसका पर्याप्त भाग राजधानी में रहता था। किन्तु एक सेना दक्षिण की भी थी जो बनवासी के उपराजा के अधीन रहती थी। एक उत्तर की सेना थी जो राज्य के किसी पुत्र के अधीन रहती थी। ये सेनायें राज्य पर बाह्य आक्रमण से रक्षा करती थी। केन्द्रीय सरकार के आदेश पर किसी भी बाहरी राज्य पर आक्रमण कर सकती थीं। राष्ट्रकूटों की पैदल सेना काफी प्रसिद्ध थीं। घुड़सवार सेना भी कम कुशल न थीं। कुछ गुल्क्ष सैनिक जातियों के होते थे, इनकी प्रसिद्धि हरावल सेना की तरह थी। कुछ सैनिक गुल्क्ष प्रांतीय शासकों और सामंतों के भी होते थे, जब महत्वपूर्ण अभियान होते थे तो तो ये बुला लिये जाते थे।

सैनिक जातियों को उनके गांवों में ही सैनिक प्रशिक्षण मिलता था। फिर वे सेना में भर्ती हो जाते थे। दूसरे सैनिकों की शिक्षा-दीक्षा पृथक सैनिकों की हेाती थी जिनके नेता किराए पर उन्हें लाते थे और केन्द्र सरकार से इसके लिए रकम पाते थे। धनी श्रेष्ठियों की मदद से सैनिक रसद विभाग का संगठन होता था। सेना में सभी जातियों के लोग थे। ब्राह्मण और जैन भी सेना में थे। राष्ट्रकूटों के प्रसिद्ध सेनापति जैसे बड़ेम श्रीविजय, नारसिंह आदि जैन थे। संभवतः उनका विश्वास या आत्ंयांतिक रूप में 'अहिंसा' मुनिया का अभीष्ट है, गृहस्थों का नहीं।[46]

साम्राज्य की राजधानी में ही प्रायः सेना का मुख्यालय होता था।[47] अलमसूदी के लेखों से ज्ञान होता है कि प्रतिहारों ने दक्षिण के राष्ट्रकूटों के आक्रमण से बचाव हेतु विशाल सेना रखा था। इसी प्रकार की व्यवस्था राष्ट्रकूटों ने भी की थी।[48] इनकी गुजरात शाखा की सेना गुर्जर-प्रतिहारों पर नजर रखती थी जबकि वनवासी का उपराजा दक्षिण के किसी संभावित आक्रमण से रक्षा के लिए तैयार रहता था।[49]

समकालीन मुस्लिम लेखकों ने राष्ट्रकूटों, पाल तथा प्रतिहारों की सेना की काफी प्रशंसा की है। राष्ट्रकूट अप्रशिक्षित एवं अकुशल सेना को विजय अभियान में नहीं लगाते थे। सेना को उचित प्रशिक्षण देने के लिए पदाधिकारियों की व्यवस्था थी।[50] डाú सेनाको नियमित रूप से भुगतान की व्यवस्था थी।[51] वन अभिलेखों से प्रकट होता है कि सैनिक अभियान में मारे गये जवानों के आश्रितों को पेंशन की व्यवस्था की गई थी।[52] राष्ट्रकूट साम्राज्य के अधिकांश राजा बहादुर थे तथा उनके पास वीर सेनापतियों की जमात थी।[53] यदा-कदा सम्राट अपने साथ परिवारजनों को भी सैनिक अभियानों में साथ रखते थे। इस तथ्य की पुष्टि इस बात से होती है जब गोविन्द तृतीय सैनिक अभियान से लौट रहा था तब रास्ते में ही उसकी रानी ने पुत्र को जन्म दिया था।[54] सेना के पास अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु साधन भी थे। कृष्ण तृतीय के दक्षिण विजय से इस बात की पुष्टि की स्पष्ट झलक मिलती है।[55]

आंतरिक सुरक्षा तथा अपराध नियंत्रण के लिए पुलिस विभाग का गठन किया गया था। चौरोधर नामक पुलिस ऑफिसर की व्यवस्था की गई थी जिसका मुख्य कार्य चोरों को पकड़ना तथा समाज को अपराध से मुक्त करना था। गुजरात के करकराज नगर के हरोली अभिलेख से इस बात की पृष्टि होती है।[56] राष्ट्रकूटों को दुर्गो के महत्व के बारे में काफी जानकारी थी।[57] मोरखिंद दुर्ग से गोविन्द तृतीय ने अपने दो प्रमुख आदेशों को निर्गत किया था।

सेना के महत्व तथा राष्ट्रकूटों की प्रतिष्ठान मुस्लिम लेखकों को काफी हद तक प्रभावित किया। अलमसूदी के शब्दों में-

The greatest of the kings of India in our-time (956 A.D.) is the Ballara (Ballabha), sovereign of he city of Mankir (Manyakheta) Many of the kings of India turn their faces towards him in their prayers, and they make supplications of his turn their faces towards him in their prayers, and they make supplications of his

REFERENCES

1) ए.पी. भदान, पूर्वो., पृ. 191

2) YEHD, p. 302

3) ए.पी. भदान पूर्वो. 192

4) IA, XII, p. 15.

5) YEHD, p. 303

6) ए. आर., पृ. 137

7) Mirashi contradicts him self by stating at one place that 'some sub-divisions of Visaya may have been known as 'rastras' (CI I, IV, pt, 1, p. 43, n. 5) In the same context he states that 'rastra was a territorial division corresponding to modern Commission corresponding to modern Commissioner's division.

8) EI, XII, p. 36

9) ए. आर. पृ., 137

10) वरोदा अभिलेख,

11) IA, XV, p. 173

12) ए. आर. पृ. 137

13) ए. पी. भदान, पूर्वो., पृ. 192

14) YEHD, p. 303

15) वही

16) IA, XI, p. 117

17) EI, VI, p. 30

18) वही

19) Their function has similer to those of the Deshmukhs and Deshpandes under the Muslims and Maratha administration.

20) Popular councils represented by adult housholders played significant role.

21) EI, III, p. 144

22) वही, ग्प्ए चण् 224

23) सिलहाराजा (कोंकण) अभिलेख, में स्पष्ट उल्लेख मिलता है। आई. ए, 5, पृ. 278

24) ए. पी. भदान, पूर्वो., पृ. 193

25) जी. याजदानी, पूर्वो. पृ. 281

26) विमलचन्द्र पाण्डेय, प्राचीन भारत का इतिहास, दिल्ली, केदारनाथ रामनाथ, तेरहवाँ संशोधित तथा संबर्धित संस्करण, 1989-90 पृ. 480

27) इसका एक ही उदाहरण चंद्रोब्बलब्बा का है जो अमोघवर्ष प्रथम की पुत्री थी और 837 ई. में रायचूर दोआब का शासन करती थी।

28) ए. ई., XVII पृ. 235

29) YEHD, p. 302

30) ए. ई., टए पृ. 89

31) ए. इं., प्टए पृ. 60

32) ए. पी. भदान, पूर्वो., पृ. 194

33) विसेंट ए. स्मिथ, (हिस्ट्र ऑफ साउथ इण्डिया, पृ. 131

34) इं. ए., गअपपपए पृ. 33

35) वी. सी. पाण्डेय, पूर्वो., पृ. 480-81

36) इं. ए., गअपपपए पृ. 235

37) जी. याजदानी, पूर्वो., पृ. 282

38) इं. ऐं., गप पृ.।।।

39) अ. स. अल्तेकर, पूर्वो. पृ.138

40) हेमचन्द्र राय चौधरी, पूर्वो.,

पृ.38-44 हेúचú राय चौधरी ने इन मंडलों के बारे में विस्तृत जानकारी खण्ड एक में दी है।

41) अ. स. अल्तेकर, पूर्वो. 179

42) वही, पृ. 175-6

43) ए. पी. भदान, पूर्वो. पृ. 194-5

44) बलराम श्रीवास्तव, पूर्वो., पृ. 340

45) अ. स. अल्तेकर, पूर्वो., पृ. 59

46) बलराम श्रीवास्तव, पूर्वो., पृ. 341-42

47) इं. ऐं., पअ पृ. 66

48) ए. पी. भदान, पूर्वो., पृ. 195

49) ए. आर., पृ. 248

50) इ. आई. गपपप पृ. 187

51) आई. आर. पृ. 251

52) आई. ऐं., गपप पृ. 39

53) इं. आई. गपपप पृ. 334

54) वही, गअपपप पृ. 244

55) मद्रास इपिग्राफिकल रपट, 1912, नं.177

56) JBBRAS, XVI, p.106

57) सामरिक दृष्टिकोण से दुर्गो का उस समय काफी महत्व था। दुर्गो में ही सेना रहती थी। दुर्ग प्रशिक्षण का केन्द्र विंदु था। यह प्रथा इस्ट इंडिया कम्पनी के आगमन के समय तक भी काफी प्रचलित रही।

58) आई. ऐं., XI पृ. 157

Copyright© 2016, IESRJ. This open-access article is published under the terms of the Creative Commons Attribution-Non Commercial 4.0 International License which permits Share (copy and redistribute the material in any medium or format) and Adapt (remix, transform, and build upon the material) under the Attribution-Non Commercial terms.